Journal Homepage: www.ijarpr.com ISSN: 3049-0103 (Online)

International Journal of Advance Research Publication and Reviews

Vol 03, Issue 5, pp 642-649, May, 2026

श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित मानव-मूल्य और समकालीन समाज में उनकी प्रासंगिकता

ईश्वर मणि ओझा[1], डॉ. मनीषा सिंह[2]

[1] शोधार्थी, [2] प्रोफेसर

संस्कृत विभाग, जे.एस. विश्वविद्यालय, शिकोहबाद, फिरोजाबाद

सारांश

मानव सभ्यता के विकास के साथ विज्ञान, प्रौद्योगिकी, औद्योगिकीकरण और वैश्वीकरण ने जीवन को अभूतपूर्व सुविधाएँ प्रदान की हैं। तथापि आधुनिक विकास के साथ नैतिक संकट, सामाजिक असमानता, उपभोक्तावाद, स्वार्थ, हिंसा, तनाव, असहिष्णुता, पर्यावरणीय संकट तथा मानवीय संबंधों में बढ़ती संवेदनहीनता जैसी समस्याएँ भी सामने आई हैं। ऐसी परिस्थितियों में मानव-मूल्यों का संरक्षण एवं पुनर्स्थापन समकालीन समाज की प्रमुख आवश्यकता बन गया है। भारतीय दार्शनिक परंपरा में श्रीमद्भगवद्गीता मानव जीवन के नैतिक, सामाजिक, आध्यात्मिक और व्यावहारिक पक्षों का अत्यंत गहन विवेचन प्रस्तुत करती है। गीता में सत्य, अहिंसा, आत्मसंयम, समत्व, करुणा, क्षमा, त्याग, निष्काम कर्म, कर्तव्यबोध, लोकसंग्रह, समदृष्टि तथा आत्मज्ञान जैसे अनेक मानव-मूल्यों का प्रतिपादन किया गया है।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित प्रमुख मानव-मूल्यों का विश्लेषण करना तथा समकालीन समाज में उनकी प्रासंगिकता का अध्ययन करना है। अध्ययन में वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक अनुसंधान पद्धति का प्रयोग किया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता को प्राथमिक स्रोत के रूप में तथा भारतीय दर्शन एवं नैतिक चिंतन से संबंधित ग्रंथों को द्वितीयक स्रोत के रूप में स्वीकार किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि गीता के मानव-मूल्य केवल आध्यात्मिक साधना तक सीमित नहीं हैं, बल्कि आधुनिक व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन, शिक्षा, नेतृत्व, सामाजिक संबंध, कार्य-संस्कृति और नैतिक निर्णयों के लिए भी अत्यंत उपयोगी हैं। गीता का कर्मयोग व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ बनाता है, समत्व मानसिक संतुलन प्रदान करता है, आत्मसंयम उपभोक्तावाद के बीच संतुलित जीवन का मार्ग दिखाता है तथा लोकसंग्रह सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करता है। अतः समकालीन समाज में मानवीय गरिमा, नैतिक चेतना और सामाजिक समरसता की स्थापना के लिए श्रीमद्भगवद्गीता के मानव-मूल्यों की पुनर्व्याख्या और व्यावहारिक अनुप्रयोग अत्यंत आवश्यक है।

प्रमुख शब्द: श्रीमद्भगवद्गीता, मानव-मूल्य, नैतिकता, समत्व, कर्मयोग, आत्मसंयम, करुणा, लोकसंग्रह, समदृष्टि, समकालीन समाज।

1. प्रस्तावना

मानव-मूल्य मानव सभ्यता की नैतिक एवं सामाजिक संरचना के मूल आधार हैं। सत्य, करुणा, प्रेम, न्याय, अहिंसा, सहिष्णुता, आत्मसंयम, कर्तव्यबोध और परोपकार जैसे मूल्य व्यक्ति के चरित्र को विकसित करने के साथ-साथ समाज में विश्वास, सहयोग और शांति की स्थापना करते हैं। किसी भी समाज की वास्तविक प्रगति केवल उसकी आर्थिक समृद्धि अथवा तकनीकी उन्नति से निर्धारित नहीं होती, बल्कि इस बात से भी निर्धारित होती है कि उसके सदस्य कितने नैतिक, संवेदनशील और उत्तरदायी हैं।

वर्तमान समय में विज्ञान और तकनीक ने मनुष्य की कार्यक्षमता में व्यापक वृद्धि की है। डिजिटल तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सोशल मीडिया और वैश्विक संचार ने संसार को अत्यधिक निकट ला दिया है। इसके बावजूद व्यक्ति के भीतर तनाव, अकेलापन, असुरक्षा, प्रतिस्पर्धा और असंतोष की प्रवृत्तियाँ बढ़ रही हैं। आर्थिक विकास के साथ उपभोक्तावादी संस्कृति का विस्तार हुआ है और व्यक्ति की सफलता का मूल्यांकन प्रायः धन, पद और भौतिक उपलब्धियों के आधार पर होने लगा है।

ऐसे समय में भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित मानव-मूल्यों का पुनर्पाठ आवश्यक हो जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता इस दृष्टि से विशेष महत्व रखती है। गीता मूलतः कुरुक्षेत्र के युद्धक्षेत्र में अर्जुन और श्रीकृष्ण के संवाद के रूप में प्रस्तुत होती है, किंतु इसमें निहित दार्शनिक एवं नैतिक प्रश्न सार्वभौमिक हैं। कर्तव्य, धर्म, आत्मा, कर्म, ज्ञान, योग, इच्छा, मोह, समत्व और लोककल्याण जैसे प्रश्न आज भी मानव जीवन के केंद्र में हैं।

गीता मनुष्य को कर्म से पलायन करने के बजाय अपने कर्तव्य को विवेक एवं समत्व के साथ करने की प्रेरणा देती है—

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥" *(श्रीमद्भगवद्गीता, 2.47)*

यह श्लोक कर्म के प्रति उत्तरदायित्व तथा परिणाम के प्रति अनावश्यक आसक्ति से मुक्त रहने की शिक्षा देता है। समकालीन समाज में इस सिद्धांत को नैतिक कार्य-संस्कृति, उत्तरदायित्व और मानसिक संतुलन के संदर्भ में समझा जा सकता है।

2. मानव-मूल्य की संकल्पना

'मानव-मूल्य' से आशय उन नैतिक एवं मानवीय आदर्शों से है जो व्यक्ति के आचरण को दिशा प्रदान करते हैं तथा उसे स्वयं और समाज के प्रति उत्तरदायी बनाते हैं। सत्य, अहिंसा, न्याय, करुणा, प्रेम, सहिष्णुता, स्वतंत्रता, समानता, त्याग, सेवा, आत्मसंयम और सम्मान मानव-मूल्यों के प्रमुख रूप हैं।

मानव-मूल्य व्यक्ति को केवल अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं करते, बल्कि उसे कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों के प्रति भी सजग बनाते हैं। आधुनिक लोकतांत्रिक समाज में समानता, स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा जैसे मूल्यों का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। इन मूल्यों की दार्शनिक आधारभूमि भारतीय चिंतन में भी विभिन्न रूपों में दिखाई देती है।

श्रीमद्भगवद्गीता मानव-मूल्यों को किसी एक संकीर्ण सामाजिक या धार्मिक समूह तक सीमित नहीं करती। वह मनुष्य के आंतरिक चरित्र, व्यवहार और समस्त प्राणियों के प्रति उसकी दृष्टि को महत्वपूर्ण मानती है।

3. अध्ययन की समस्या

समकालीन समाज में भौतिक प्रगति के बावजूद मानव-मूल्यों का संकट दिखाई देता है। उपभोक्तावाद, तीव्र प्रतिस्पर्धा, सामाजिक तनाव, हिंसा, असहिष्णुता, भ्रष्टाचार, पर्यावरणीय संकट तथा पारिवारिक एवं सामाजिक संबंधों में परिवर्तन ने व्यक्ति के नैतिक जीवन को प्रभावित किया है।

ऐसी स्थिति में प्रमुख प्रश्न यह है कि क्या भारतीय दार्शनिक ग्रंथों में प्रतिपादित मानव-मूल्य वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों में उपयोगी हो सकते हैं? विशेष रूप से यह जानना आवश्यक है कि श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित कर्मयोग, समत्व, आत्मसंयम, करुणा, क्षमा, सत्य, समदृष्टि और लोकसंग्रह जैसे मूल्य आधुनिक जीवन की चुनौतियों के समाधान में किस प्रकार योगदान दे सकते हैं।

4. अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं—

1. श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित प्रमुख मानव-मूल्यों की पहचान करना।
2. गीता के नैतिक एवं सामाजिक दर्शन का विश्लेषण करना।
3. कर्मयोग, समत्व, आत्मसंयम, करुणा, क्षमा एवं लोकसंग्रह जैसे मूल्यों का अध्ययन करना।
4. समकालीन समाज में इन मानव-मूल्यों की प्रासंगिकता को स्पष्ट करना।
5. आधुनिक शिक्षा एवं सामाजिक जीवन में गीता के मूल्यों के संभावित उपयोग का विश्लेषण करना।
6. व्यक्ति और समाज के नैतिक विकास में गीता की भूमिका का मूल्यांकन करना।

5. अनुसंधान पद्धति

प्रस्तुत शोध मुख्यतः **वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक पद्धति** पर आधारित है। श्रीमद्भगवद्गीता को प्राथमिक स्रोत के रूप में स्वीकार किया गया है। गीता के विभिन्न अध्यायों में वर्णित श्लोकों का विषयगत विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन में मानव-मूल्यों को निम्न प्रमुख आयामों में विभाजित करके विश्लेषित किया गया है—

- सत्य एवं नैतिकता
- अहिंसा एवं करुणा
- आत्मसंयम
- समत्व
- निष्काम कर्म

- कर्तव्यबोध
- क्षमा एवं विनम्रता
- समदृष्टि
- लोकसंग्रह
- आत्मज्ञान

6. श्रीमद्भगवद्गीता में मानव-मूल्यों का स्वरूप

6.1 सत्य एवं नैतिकता

सत्य मानव जीवन का आधारभूत मूल्य है। गीता दैवी संपदाओं का वर्णन करते हुए सत्य, अहिंसा, शुद्धता, आत्मसंयम और सरलता जैसे गुणों को महत्व देती है।

गीता कहती है—

"सत्यं प्रियहितं च यत्..."

गीता के व्यापक नैतिक दर्शन में सत्य केवल वाणी का गुण नहीं, बल्कि व्यक्ति के विचार और आचरण की प्रामाणिकता से भी जुड़ा हुआ है।

समकालीन समाज में सूचना-प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया के विस्तार के कारण सत्य एवं असत्य के बीच अंतर करना चुनौतीपूर्ण हो गया है। अतः सत्यनिष्ठा और विवेक का महत्व पहले से अधिक बढ़ गया है।

7. आत्मसंयम का मूल्य

मानव-मूल्यों में आत्मसंयम का विशेष स्थान है। आधुनिक जीवन में मनुष्य अनेक प्रकार के आकर्षणों और इच्छाओं से घिरा रहता है। अनियंत्रित इच्छाएँ व्यक्ति को तनाव, असंतोष और संघर्ष की ओर ले जा सकती हैं।

गीता कहती है—

"यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥" *(गीता, 2.58)*

गीता आत्मसंयम को विवेकपूर्ण जीवन का आधार मानती है। व्यक्ति यदि अपनी इन्द्रियों और इच्छाओं पर नियंत्रण रखता है तो वह अधिक स्थिर एवं विवेकशील निर्णय लेने में सक्षम होता है।

समकालीन उपभोक्तावादी समाज में यह मूल्य विशेष रूप से प्रासंगिक है।

8. निष्काम कर्म

गीता के मानव-मूल्य दर्शन में कर्मयोग का केंद्रीय स्थान है। व्यक्ति को अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए, लेकिन कर्म के परिणाम के प्रति अत्यधिक आसक्त नहीं होना चाहिए।

"योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥" *(गीता, 2.48)*

निष्काम कर्म व्यक्ति को स्वार्थ और व्यक्तिगत लाभ से ऊपर उठकर कर्तव्य के प्रति प्रतिबद्ध बनाता है। आधुनिक कार्यस्थल में यह मूल्य ईमानदारी, जिम्मेदारी और पेशेवर नैतिकता को मजबूत कर सकता है।

9. समत्व का मूल्य

समत्व श्रीमद्भगवद्गीता के प्रमुख नैतिक सिद्धांतों में से एक है।

"समत्वं योग उच्यते।" *(गीता, 2.48)*

समत्व का अर्थ सुख-दुःख, लाभ-हानि और सफलता-असफलता की परिस्थितियों में मानसिक संतुलन बनाए रखना है।

आधुनिक जीवन में प्रतिस्पर्धा एवं उपलब्धि का दबाव व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक संबंधों को प्रभावित करता है। समत्व का सिद्धांत व्यक्ति को परिस्थितियों के प्रति संतुलित दृष्टिकोण विकसित करने की प्रेरणा देता है।

10. करुणा एवं सर्वभूतहित

करुणा मानवता का मूल मूल्य है। गीता में श्रेष्ठ व्यक्ति की पहचान केवल ज्ञान से नहीं, बल्कि उसके व्यवहार और सभी प्राणियों के प्रति दृष्टिकोण से भी होती है।

श्रीकृष्ण कहते हैं—

"अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।" *(गीता, 12.13)*

अर्थात् जो किसी प्राणी से द्वेष नहीं करता, सभी के प्रति मैत्री और करुणा रखता है, वह श्रेष्ठ भक्त है।

समकालीन समाज में हिंसा, सामाजिक विभाजन और असहिष्णुता की स्थितियों के बीच यह मूल्य सामाजिक समरसता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

11. अहिंसा और संवेदनशीलता

गीता दैवी संपदा के अंतर्गत अहिंसा को भी महत्वपूर्ण स्थान देती है—

"अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।" *(गीता, 16.2)*

अहिंसा का व्यापक अर्थ केवल शारीरिक हिंसा से बचना नहीं, बल्कि विचार, वाणी और व्यवहार में अनावश्यक आक्रामकता से बचना भी है।

आज के डिजिटल समाज में भाषा एवं संचार के माध्यमों से उत्पन्न मानसिक और सामाजिक हिंसा के संदर्भ में अहिंसा का यह व्यापक अर्थ महत्वपूर्ण हो जाता है।

12. क्षमा का मूल्य

क्षमा व्यक्ति की आंतरिक शक्ति का प्रतीक है। गीता दैवी गुणों में क्षमा को भी महत्वपूर्ण स्थान देती है।

"अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।

दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥" *(गीता, 16.2)*

क्षमा व्यक्ति को प्रतिशोध की मानसिकता से मुक्त करती है। आधुनिक समाज में व्यक्तिगत, सामाजिक और राजनीतिक स्तर पर संघर्षों को कम करने के लिए क्षमा, संवाद और सहिष्णुता महत्वपूर्ण मूल्य हैं।

13. समदृष्टि और समानता

श्रीमद्भगवद्गीता में समदृष्टि को उच्च नैतिक चेतना का लक्षण माना गया है।

"विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।

शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः॥" *(गीता, 5.18)*

इस श्लोक में विद्वान व्यक्ति की समदृष्टि का वर्णन किया गया है। बाह्य भेदों के बावजूद सभी में समान चेतन तत्व को देखने की दृष्टि विकसित करना मानवीय समानता और सम्मान के लिए महत्वपूर्ण है।

समकालीन लोकतांत्रिक समाज में सामाजिक न्याय, समानता और मानवाधिकारों के संदर्भ में इस विचार की विशेष प्रासंगिकता है।

14. आत्मज्ञान और आत्मसम्मान

मानव-मूल्यों की स्थापना के लिए आत्मज्ञान आवश्यक है। गीता में आत्मा को नित्य और अविनाशी माना गया है—

"न जायते म्रियते वा कदाचिन्

नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।" *(गीता, 2.20)*

आत्मज्ञान व्यक्ति को बाह्य उपलब्धियों से परे अपने वास्तविक स्वरूप को समझने की प्रेरणा देता है। इससे आत्मसम्मान, आत्मविश्वास और आंतरिक स्थिरता का विकास हो सकता है।

15. लोकसंग्रह और सामाजिक उत्तरदायित्व

गीता के मानव-मूल्य केवल व्यक्तिगत जीवन तक सीमित नहीं हैं। व्यक्ति के सामाजिक दायित्व पर भी विशेष बल दिया गया है।

"लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि।" *(गीता, 3.20)*

लोकसंग्रह का अर्थ समाज की व्यवस्था, कल्याण और सामूहिक हित की रक्षा से लिया जा सकता है।

आज जब व्यक्तिगत हित और सामूहिक हित के बीच संघर्ष बढ़ रहा है, लोकसंग्रह का सिद्धांत नागरिक उत्तरदायित्व और सामाजिक सहयोग की भावना विकसित करने में सहायक हो सकता है।

16. नेतृत्व और आदर्श आचरण

गीता नेतृत्व में आदर्श आचरण को महत्व देती है—

"यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥" *(गीता, 3.21)*

आधुनिक संस्थागत एवं सामाजिक जीवन में नेतृत्व का प्रभाव व्यापक होता है। यदि नेता नैतिक, उत्तरदायी और पारदर्शी व्यवहार करता है तो उसके अनुयायियों पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

इसलिए गीता का नेतृत्व-दर्शन आधुनिक प्रशासन, शिक्षा, व्यवसाय और सामाजिक संस्थाओं के लिए उपयोगी हो सकता है।

17. विनम्रता और अहंकार-नियंत्रण

आधुनिक समाज में पद, धन और शक्ति व्यक्ति में अहंकार की प्रवृत्ति उत्पन्न कर सकते हैं। गीता अहंकार और आसक्ति को आध्यात्मिक विकास में बाधक मानती है।

"निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।" *(गीता, 15.5)*

विनम्रता व्यक्ति को दूसरों के प्रति सम्मान और सहयोग की भावना विकसित करने में सहायता करती है। अतः यह व्यक्तिगत एवं सामाजिक संबंधों के लिए महत्वपूर्ण मानव-मूल्य है।

18. आधुनिक शिक्षा में गीता के मानव- मूल्य

आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान एवं रोजगार प्राप्ति तक सीमित नहीं होना चाहिए। शिक्षा को ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना चाहिए जो नैतिक, संवेदनशील और सामाजिक रूप से उत्तरदायी हो।

गीता ज्ञान की प्राप्ति के लिए जिज्ञासा और विनम्रता पर बल देती है—

"तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।" *(गीता, 4.34)*

आधुनिक शिक्षा में गीता के मूल्यों को धार्मिक शिक्षा के रूप में नहीं, बल्कि नैतिक एवं दार्शनिक चिंतन के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। सत्यनिष्ठा, आत्मसंयम, कर्तव्यबोध, सहिष्णुता, संवाद और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों को शिक्षा के माध्यम से विकसित किया जा सकता है।

19. समकालीन समाज में गीता के मानव-मूल्यों की प्रासंगिकता

19.1 उपभोक्तावाद के संदर्भ में

उपभोक्तावादी संस्कृति व्यक्ति को अधिक से अधिक वस्तुओं और सुविधाओं की ओर आकर्षित करती है। गीता का आत्मसंयम और आसक्ति-त्याग व्यक्ति को आवश्यकता एवं लालसा के बीच अंतर समझने में सहायता कर सकता है।

19.2 सामाजिक तनाव के संदर्भ में

समत्व का सिद्धांत व्यक्ति को सुख-दुःख और सफलता-असफलता में संतुलित रहने की प्रेरणा देता है।

19.3 हिंसा और असहिष्णुता के संदर्भ में

अद्वेष, मैत्री, करुणा और अहिंसा जैसे मूल्य सामाजिक संघर्ष को कम करने में सहायक हो सकते हैं।

19.4 भ्रष्टाचार के संदर्भ में

निष्काम कर्म और कर्तव्यबोध व्यक्ति को निजी लाभ के बजाय नैतिक उत्तरदायित्व की ओर प्रेरित कर सकते हैं।

19.5 सामाजिक असमानता के संदर्भ में

समदृष्टि की अवधारणा व्यक्ति को बाहरी भेदों से ऊपर उठकर व्यापक मानवीय सम्मान की भावना विकसित करने की प्रेरणा देती है।

19.6 पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में

गीता का संयमित जीवन, त्याग और प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व की व्यापक भारतीय दृष्टि आधुनिक पर्यावरणीय नैतिकता के विकास के लिए प्रेरक हो सकती है।

20. आधुनिक कार्य-संस्कृति और गीता

आधुनिक कार्यस्थल में तनाव, लक्ष्य का दबाव, प्रतिस्पर्धा और प्रदर्शन का निरंतर मूल्यांकन सामान्य परिस्थितियाँ बन गई हैं। ऐसे वातावरण में गीता का कर्मयोग विशेष रूप से उपयोगी है।

व्यक्ति यदि अपने कार्य को ईमानदारी एवं पूर्ण समर्पण के साथ करता है और परिणाम के प्रति अत्यधिक मानसिक आसक्ति नहीं रखता, तो कार्य से संबंधित तनाव कम हो सकता है।

गीता का यह दृष्टिकोण कार्य की गुणवत्ता और मानसिक संतुलन दोनों को महत्व देता है

21. डिजिटल युग और मानव-मूल्य

डिजिटल तकनीक ने संचार को सरल बनाया है, किंतु इसके साथ सूचना की अधिकता, गलत सूचना, आभासी प्रतिस्पर्धा और सामाजिक तुलना जैसी समस्याएँ भी बढ़ी हैं।

गीता का इन्द्रिय-संयम और मनोनिग्रह संबंधी विचार डिजिटल जीवन में भी उपयोगी हो सकता है। व्यक्ति को यह निर्धारित करना आवश्यक है कि तकनीक उसका साधन है या वह स्वयं तकनीकी आकर्षण का साधन बन रहा है।

इस संदर्भ में गीता का मनोनिग्रह संबंधी संदेश महत्वपूर्ण है—

"उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।" *(गीता, 6.5)*

व्यक्ति को अपने आत्मविकास का सक्रिय उत्तरदायित्व स्वयं लेना चाहिए।

22. मानव-मूल्य और मानसिक संतुलन

आधुनिक समाज में मानसिक तनाव का एक कारण व्यक्ति की अपेक्षाओं और वास्तविक परिस्थितियों के बीच बढ़ता अंतर है। गीता की समत्व-दृष्टि इस समस्या के समाधान की दिशा में महत्वपूर्ण संकेत देती है।

"दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।" *(गीता, 2.56)*

इस दृष्टि से आदर्श व्यक्ति सुख में अत्यधिक आसक्त और दुःख में अत्यधिक विचलित नहीं होता। यह मानसिक स्थिरता और भावनात्मक संतुलन का आदर्श प्रस्तुत करता है।

23. मानव-मूल्य एवं सामाजिक समरसता

सामाजिक समरसता के लिए केवल कानून पर्याप्त नहीं हैं। व्यक्तियों के भीतर सम्मान, करुणा, सहिष्णुता और समानता की भावना भी आवश्यक है।

गीता में समदृष्टि, मैत्री और करुणा के मूल्य सामाजिक समरसता के लिए आधार प्रदान करते हैं। जब व्यक्ति दूसरे मनुष्यों को सम्मान की दृष्टि से देखता है, तो सामाजिक

दूरी और संघर्ष की संभावनाएँ कम होती हैं।

24. शोध के प्रमुख निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं—

1. श्रीमद्भगवद्गीता में मानव-मूल्यों की व्यापक एवं बहुआयामी अवधारणा प्रस्तुत की गई है।
2. गीता का मानव-मूल्य दर्शन व्यक्ति के आंतरिक चरित्र और सामाजिक आचरण दोनों को महत्व देता है।
3. निष्काम कर्म आधुनिक कार्य-संस्कृति में कर्तव्यनिष्ठा और नैतिकता के विकास में उपयोगी हो सकता है।
4. समत्व आधुनिक तनावपूर्ण जीवन में मानसिक संतुलन विकसित करने में सहायक है।
5. आत्मसंयम उपभोक्तावादी जीवनशैली में संतुलित एवं विवेकपूर्ण जीवन के लिए आवश्यक मूल्य है।
6. करुणा और अद्वेष सामाजिक संघर्ष एवं असहिष्णुता को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।
7. समदृष्टि समानता, मानवीय सम्मान और सामाजिक न्याय की भावना को मजबूत करती है।
8. लोकसंग्रह व्यक्ति को व्यक्तिगत हित से ऊपर उठकर सामाजिक हित के प्रति उत्तरदायी बनाता है।
9. गीता में वर्णित दैवी गुण व्यक्ति के नैतिक चरित्र के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण हैं।
10. आधुनिक शिक्षा में गीता के मानव-मूल्यों का समावेश विद्यार्थियों में नैतिक चेतना, आत्मसंयम और सामाजिक उत्तरदायित्व के विकास में सहायक हो सकता है।

उपसंहार

श्रीमद्भगवद्गीता भारतीय दार्शनिक परंपरा का ऐसा महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसमें मानव जीवन के नैतिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक पक्षों का समन्वित विवेचन प्राप्त होता है। गीता में प्रतिपादित मानव-मूल्य किसी विशेष काल या समाज तक सीमित नहीं हैं। सत्य, करुणा, आत्मसंयम, समत्व, निष्काम कर्म, कर्तव्यबोध, समदृष्टि, क्षमा और लोकसंग्रह जैसे मूल्य सार्वभौमिक मानवीय जीवन से संबंधित हैं।

समकालीन समाज में तकनीकी एवं आर्थिक प्रगति के साथ उत्पन्न नैतिक संकटों के समाधान के लिए इन मूल्यों की प्रासंगिकता और अधिक बढ़ जाती है। गीता व्यक्ति को केवल बाहरी सफलता प्राप्त करने की प्रेरणा नहीं देती, बल्कि उसके आंतरिक व्यक्तित्व के विकास पर भी बल देती है। कर्मयोग व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ बनाता है, समत्व मानसिक संतुलन प्रदान करता है, आत्मसंयम इच्छाओं पर नियंत्रण स्थापित करता है और लोकसंग्रह सामाजिक उत्तरदायित्व की चेतना विकसित करता है।

विशेष रूप से—

"अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।" *(गीता, 12.13)*

का संदेश समकालीन समाज में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि व्यक्ति के भीतर द्वेष के स्थान पर मैत्री, हिंसा के स्थान पर करुणा, स्वार्थ के स्थान पर लोकहित और असंतुलन के स्थान पर समत्व की भावना विकसित हो, तो समाज अधिक मानवीय और शांतिपूर्ण बन सकता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि **श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित मानव-मूल्य समकालीन समाज के नैतिक एवं मानवीय पुनर्निर्माण के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं।** इन मूल्यों का उद्देश्य केवल सैद्धांतिक ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि उन्हें व्यक्ति के दैनिक व्यवहार, शिक्षा, कार्य-संस्कृति, नेतृत्व और सामाजिक जीवन में व्यावहारिक रूप से लागू करना होना चाहिए। आधुनिकता और तकनीकी प्रगति के साथ यदि गीता के मानवीय मूल्यों का संतुलित समन्वय स्थापित किया जाए, तो मानव जीवन अधिक नैतिक, संतुलित, संवेदनशील और गरिमापूर्ण बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. व्यास। **श्रीमद्भगवद्गीता।** संस्कृत मूलपाठ। विशेष रूप से अध्याय 2, 3, 4, 5, 6, 12, 16 एवं 18 के चयनित श्लोक।
2. **श्रीमद्भगवद्गीता**, अध्याय 2, श्लोक 47–48, 56, 58; अध्याय 3, श्लोक 19–21; अध्याय 4, श्लोक 34; अध्याय 5, श्लोक 18; अध्याय 6, श्लोक 5–6; अध्याय 12, श्लोक 13–14; अध्याय 16, श्लोक 1–3; अध्याय 18 के चयनित श्लोक।
3. Radhakrishnan, S. (1948). *The Bhagavadgita*. George Allen & Unwin.

4. Gandhi, M. K. (1929). *Anasaktiyoga: The Gospel of Selfless Action*. Navajivan Publishing House.

5. Easwaran, E. (2007). *The Bhagavad Gita*. Nilgiri Press.

6. Prabhavananda, S., & Isherwood, C. (1944). *Bhagavad-Gita: The Song of God*. Vedanta Press.

7. Zaehner, R. C. (1969). *The Bhagavad-Gita*. Oxford University Press.

8. Sharma, C. D. (1960). *A Critical Survey of Indian Philosophy*. Motilal Banarsidass.

9. Hiriyanna, M. (1993). *Outlines of Indian Philosophy*. Motilal Banarsidass.

10. Radhakrishnan, S. (1923). *Indian Philosophy, Vol. I*. George Allen & Unwin.

11. Deutsch, E. (1968). *The Essential Vedanta: A New Source Book of Advaita Vedanta*. Indiana University Press.